NATIONAL HUMAN RIGHTS COMMISSION

HINDUSTAN, Delhi, 1.9.2022
Page No. 11, Size:(11.99)cms X (15.24)cms.

गोधरा कांड से जुड़ी याचिकाओं को व्यर्थ मानकर शीर्ष न्यायालय ने सुनवाई बंद की

गुजरात दंगों से जुड़े मामले खत्म करना सामान्य कानूनी प्रक्रिया

फैसले का फलसफा

■ श्याम सुमन

नई दिल्ली। गुजरात के गोधरा में ट्रेन के अंदर 60 कारसेवकों को जलाने के बाद 2002 में हुए दंगों के मामले में दायर 10 याचिकाओं को मंगलवार को व्यर्थ मानकर सुप्रीम कोर्ट ने सुनवाई बंद कर दी और उनका निस्तारण कर दिया। गुजरात दंगों पर एक महीने में यह दूसरा निर्णय है, जो प्रथम दृष्टया प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और उनकी सरकार के पक्ष में जाता जान पड़ रहा है, लेकिन बारीकी से देखें तो यह बेहद कानूनी और औचित्यपूर्ण आदेश हैं जो सामान्य तौर पर कोर्ट में आए दिन दिए जाते हैं, जिनकी चर्चा भी नहीं होती।

सामान्य तौर पर जब याचिकाओं में मांगी गई राहत पूरी हो जाती हैं, तो सुप्रीम कोर्ट रूल्स, 2013 और दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 के अनुसार याचिका का निस्तारण कर दिया जाता है। इसके अलावा यह मामला 25 जुलाई को आए एक फैसले से भी जुड़ा हुआ है जिसमें सुप्रीम कोर्ट ने तत्कालीन मुख्यमंत्री मोदी को एक समुदाय विशेष के खिलाफ दंगे करवाने के व्यापक षड्यंत्र के आरोप से बरी कर दिया था।

एक ऐसी ही हिला देने वाली घटना अप्रैल में हुई थी। चार साल की अबोध बच्ची की रेप के बाद हत्या करने वाले मध्य प्रदेश के अब्दुल (35) को जस्टिस यूयू ललित की पीठ ने छोड़ दिया। कोर्ट रिहा करते हुए कहा था, हर अपराधी का एक भविष्य होता है और हर संत का एक भूतकाल। इस फैसले के खिलाफ शोर मचा और महिला संगठनों ने समीक्षा याचिका दायर की लेकिन जस्टिस ललित ने मई में उसे भी खारिज कर दिया।

दरअसल, गुजरात दंगों के ये केस वे थे जिनमें की गई सीबीआई / उचित जांच की मांगें या अन्य राहत, उच्च शक्ति प्राप्त एसआईटी (विशेष जांच दल सीबीआई के पूर्व निदेशक आरके राघवन, एक पूर्व डीजीपी और तीन आईपीएस की अध्यक्षता में) बनाकर पूरी की जा चुकी हैं। याचिकाकर्ताओं में तीस्ता, जकिया, दंगों के पीड़ित और राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग भी थे। जांच की निगरानी सुप्रीम कोर्ट ने की थी और एक-एक कार्रवाई सुप्रीम कोर्ट में लगभग हर महीने पेश की जाती थी।

मार्च 2008 में गठित राघवन कमेटी ने 10 मामलों में रिपोर्ट दे दी और उसके आधार पर नरोदा पाटिया, बेस्ट बेकरी हिंसा, गुलबर्गा सोसायटी आदि जिसमें एक मंत्री और कई विधायक तथा गुंडा बाबू बजरंगी उम्रकैद की सजा काट रहे हैं, और शेष में ट्रायल चल रहे हैं। गुलबर्गा मामले में सांसद एहसान जाफरी मारे गए थे। यह भी तथ्य था कि दंगों के दौरान जब भीड़ सोसायटी के पास पहुचीं तो जाफरी ने लाइसेंसी बंदूक से भीड़ पर फायर किए। इसके बाद भीड़ ने उनके फ्लैट पर हमला किया।

इसके बाद दंगे कराने की व्यापक साजिश का मामला उठाया गया। सुप्रीम कोर्ट ने तीस्ता सीतलवाड़ और जाफरी की पत्नी जकिया की याचिका पर 2009 में राघवन कमेटी को मोदी समेत 40 नेताओं की षडयंत्र के कोण से जांच करने का आदेश दिया। कमेटी ने तत्कालीन सीएम से नौ घंटे तक कड़ी पूछताछ भी की। पर मामला सिद्ध नहीं हो सका और कमेटी ने क्लीन चिट दे दी। कोर्ट ने याचिका को खारिज कर दिया और कहा कि इन याचिकाओं का मतलब सिर्फ केतली को उबालते रहना (मामले को गर्म रखना) था। कोर्ट ने पाया कि मामले में सैकड़ों शपथपत्र, जो साइक्लोस्टाइल थे, जिसमें नाम बदला जाता था मजमून वही रहता था।

10

मामलों में गठित राघवन कमेटी ने अपनी रिपोर्ट दे दी मार्च 2008 में

तीन प्रमुख मामले, जिन पर खूब बहस हुई

1 राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग बनाम भारत संघ 2003 : नौ मामलों नरोदा पटिया, नरोदा गाम, गुलबर्गा सोसायटी, बेस्ट बेकरी आदि की जांच सीबीआई को स्थानांतरण के लिए

2 तीस्ता सीतलवाड़ बनाम गुजरात 2017 : गिरफ्तारी से सुरक्षा के लिए अर्जी

3 जकिया जाफरी बनाम गुजरात सरकार 2008- दंगे कराने की व्यापक साजिश की जांच

अफसरों के दावे खारिज

पुलिस अधिकारी श्रीकुमार और संजीव भट्ट जैसे लोग भी आए, जो मोदी से अपने पुराने हिसाब चुकता करना चाहते थे। कोर्ट ने उनके दावे भी खारिज कर दिए और कहा कि कानून व्यवस्था पर फरवरी 2002 में हुई बैठक, जिसमें समुदाय विशेष को निशाना बनाने का निर्देश देने का दावा किया गया था, उसमें वे मौजूद तक नहीं गए थे।

षड्यंत्र सिंड्रोम (एपोफीनिया)

ऐसे मामले जिनमें कोई प्रभावशाली व्यक्ति शामिल होता है, कोई घटना होती है तो उसे अन्य चीजों से जोड़कर देखने या षडयंत्र का कोण जरूर आता है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार सामान्य लोगों की मन:स्थिति को घटनाओं में षड्यंत्र के तत्व डालकर संतोष मिलता है (एपोफीनिया)। ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं। ब्रिटेन की राजकुमारी डायना की सड़क हादसे में मौत को उनकी हत्या के रूप में देखा गया था। इसमें जांच भी हुई थी। दिल्ली में भाजपा नेता गोपीनाथ मुंडे की सड़क हादसे में मौत, प्रमोद महाजन की भाई द्वारा हत्या, नेताजी की हवाई हादसे में मौत को षड्यंत्र माना गया था। पूर्व प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री की ताशकंद में मौत को भी साजिश बताया गया था। पाकिस्तान के तानाशाह जनरल की विमान हादसे में मौत भी इसका उदाहरण है।

Separate schedule for denotified tribes needs urgent consideration and action: Justice S. Ravindra Bhat

https://www.thehindu.com/news/national/separate-schedule-for-denotified-tribes-needs-urgent-consideration-and-action-justice-s-ravindra-bhat/article65834616.ece

Supreme Court judge Justice S. Ravindra Bhat on Wednesday said creating a separate Schedule in the Constitution for denotified, nomadic, and semi-nomadic tribes and the extension of the Prevention of Atrocities against SC/ST Act to them “requires urgent consideration and appropriate action”.

His remarks came as he was delivering the Vimukta Day Lecture 2022 organised by the Criminal Justice & Police Accountability Project on the 70th year of decriminalisation of the Criminal Tribes Act.

Justice Bhat added that the government should show an “essence of urgency” to finish the ethnographic survey of DNT communities that have been left out of the SC, ST, and OBC lists and ensure that it translates into “tangible policy measures that extend the benefit of affirmative action to the appropriate communities as well.”

The Anthropological Survey of India and three Tribal Research Institutes in the country are currently engaged in studying 267 DNT, NT, SNT communities that have so far not been categorised as either SC, ST, or OBC. The AnSI has submitted reports on 24 communities out of the 255 it ought to and has assured the Ministry of Social Justice and Empowerment that the rest would be done by October this year.

As a result of this delay in this ethnographic exercise, the government’s SEED scheme has been held up with over 400 applications for benefits received but none of them approved so far, as reported by The Hindu earlier this week.

During the lecture, Justice Bhat also addressed how environmental laws, habitual offender laws, and forest conservation laws have been framed without considering that the livelihoods of DNT communities depended on certain traditional practices that are even now criminalised as a result.

Justice Bhat said, “Unfortunately, unlike colonial administrations which relied heavily on documentation and archival efforts and based their policies on such exercises for good or for worse, the stereotypes for DNTs and prejudicial treatment suffered by them is the subject of very limited contemporary empirical evidence severely restricting the scope of reformative measures.”

“The Idate commission in 2017 comprehensively prepared lists of Denotified, nomadic, and semi-nomadic communities that are not recipients of affirmative action under the Constitutional mandate of SC, ST, OBC. To determine who within the identified 269 tribes need to be considered for inclusion requires close scrutiny,” he said.

On the slowness of the ethnographic survey, Justice Bhat noted that even a Parliamentary Standing Committee had pointed this out and sought a fixed date for its completion. “It is unfortunate that despite consistent conclusions by the national commissions, little has been done. State has to be alerted to ensure that this ethnographical exercise is completed and should show an essence of urgency which leads to tangible policy measures that extend the benefit of affirmative action to the appropriate communities as well,“ he said.

The Supreme Court Judge added, “Members of the CPA have themselves pointed out that since the NCRB prepares a detailed annual report detailing statistics of prisoners accused and convicted of crimes, it could be used to analyse the impact of the criminal system on the DNTs if data was collected on caste as a relevancy and perhaps warrants consideration.

“Similarly, in the absence of caste-specific demographics in the Census, there is difficulty in assessing the necessity and extent of reform policies required for the betterment of these (DNT) communities. However, collection of data in relation to caste is a complex matter in Indian society, even contentious and has to be done with the utmost care and consideration so that it can be used to facilitate welfare policies rather than offend the preambulatory principle of fraternity and cause more social divisions.“

“Constitutional guarantees include at the root of them non-discrimination under Article 15 (1) and Article (17) which are applicable not just against the state - which percolate to changing societal attitudes of stigmatisation when declining to provide, housing, jobs, etc. In this regard, the consistent suggestion across decades - be it the NHRC report of 2000 or the Idate Commission recommendations (2017), to create a separate schedule for these DNT (denotified, nomadic, semi-nomadic tribes) communities and extend the protection of the prevention of atrocities against SC/ST Act requires urgent consideration and appropriate action,” Justice Bhat said.

NATIONAL HUMAN RIGHTS COMMISSION

BUSINESS STANDARD, Online, 1.9.2022

Page No. 0, Size:(0)cms X (0)cms.

ISRO spy case victim Maldivian national Fousia Hassan dies in Colombo

https://www.business-standard.com/article/current-affairs/isro-spy-case-victim-maldivian-national-fousia-hassan-dies-in-colombo-122083100451_1.html

Maldivian national Fousia Hassan, who was in the news during the height of the ISRO spy case here in 1994, died on Wednesday at a hospital in Colombo where she was undergoing treatment.

Although a Maldivian national, she was based in Colombo and was recently in the news after Hassan and Mariam Rasheeda, another Maldivian national who was also accused in the spy case, approached the Supreme Court through the CBI seeking a compensation of Rs 2 crore each for being wrongly implicated in the case.

The ISRO spy case surfaced in 1994 when S. Nambi Narayanan, a top scientist at the ISRO unit here, was arrested on charges of espionage along with another senior officials of the space agaency, Hassan, Rasheeda and a businessman.

In September 2021, the CBI had registered an FIR at the Thiruvananthapuram Chief Judicial Magistrate's Court against 18 people, all of whom had probed the case and included top former Kerala Police and IB officials, who have been charged with conspiracy and fabrication of documents.

When the apex court decided to reopen the case, it asked all then accused and witnesses to inform the new CBI probe team if they have anything to say.

Incidentally had it not been for the Covid lockdown norms, the CBI team was to travel to Colombo to take a statement from Hassan and then from Rasheeda.

Things changed for Narayanan when the Supreme Court in 2020 appointed a three-member committee headed by retired judge Justice D.K. Jain to probe if there was a conspiracy among the then police officials to falsely implicate Narayanan.

The CBI freed Narayanan in 1995 and since then he has been fighting a legal battle against Mathews, S. Vijayan and Joshua who probed the case and falsely implicated him.

Narayanan has now received a compensation of Rs 1.9 crore from various agencies, including the Kerala government which in 2020 paid him Rs 1.3 crore and later awarded Rs 50 lakhs as directed by the Supreme Court in 2018 and another Rs 10 lakhs ordered by the National Human Rights Commission.

The compensation was because the former ISRO scientist had to suffer wrongful imprisonment, malicious prosecution and humiliation.

Now with Hassan dead, it remains to be seen the fate of the petition.

They have demanded that the compensation be recovered from the 18 officials who have now been named in the FIR.

Rasheeda has filed another petition to register a separate case against then probe official S. Vijayan who had allegedly misbehaved with her.

NATIONAL HUMAN RIGHTS COMMISSION

BEFORE PRINT NEWS, Online, 1.9.2022
Page No. 0, Size:(0)cms X (0)cms.

बांग्लादेशी महिला डेढ़ वर्ष से कर रही है वतन वापसी का इंतजार

https://www.beforeprint.in/news/bihar-news/bangladeshi-woman-has-been-waiting-for-one-and-a-half-year-to-return-home/

बांग्लादेशी महिला रिया आफरीन रूपा के मामले में बिहार मानवाधिकार आयोग ने सख्त रुख अख्तियार किया है। आयोग के सदस्य न्यायाधीश उज्ज्वल कुमार दुबे ने सुनवाई करते हुए कहा कि सजा पूरी होने के बाद भी उक्त महिला को सात महीने तक जेल में क्यों रखा गया।

उन्होंने सख्त रुख अपनाते हुए अपर मुख्य सचिव को तलब किया है। पीड़ित महिला की ओर से मानवाधिकार अधिवक्ता एस. के. झा आयोग में मामले की पैरवी कर रहे हैं। आयोग ने मामले में कहा कि पीड़ित महिला को करीब सात महीने तक अवैध रूप से जेल में रखकर उसके मानवाधिकार का अतिक्रमण किया गया है। आयोग ने मामले में 29 नवंबर तक अपर मुख्य सचिव से जवाब की माँग की है, जिसपर 7 दिसंबर को सुनवाई होनी है।

बताते चले कि बांग्लादेश के खालिसपुर, जिला- खुलना की रहनेवाली रिया आफरीन रूपा को 2019 में स्थानीय दलाल के द्वारा नौकरी का झाँसा देकर भारत लाया गया और मानव तस्करों के हवाले कर दिया गया। 12 अक्तूबर 2019 को नालंदा जिला के नूरसराय थाना क्षेत्र के अहियापुर गाँव में भटकती हुई उक्त महिला को पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया। पुलिस ने बिना पासपोर्ट भारत में प्रवेश करने के जुर्म में उसे जेल भेज दिया। त्वरित न्यायालय प्रथम बिहारशरीफ (नालंदा) ने उसे एक साल की सजा सुनाई और 500 रुपए का अर्थ दंड भी लगाया।

500 रुपया अर्थ दंड नहीं देने की स्थिति में सात दिनों का अतिरिक्त कारावास भी उस महिला ने काटी। उक्त महिला, कारावास की सजा पूरी कर 22 जनवरी 2021 को जेल से बाहर निकलने वाली थी। नाम पता का सत्यापन नही होने के कारण महिला, मंडल कारा बिहारशरीफ में ही पड़ी रही। मामले की जानकारी जब मानवाधिकार मामलों के अधिवक्ता एस. के. झा को हुई, तब उन्होंने इस पूरे मामले की जानकारी राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली एवं बिहार मानवाधिकार आयोग, पटना को दिए, तत्पश्चात आयोग ने अपने स्तर से जाँच शुरू कर दी।

मानवाधिकार अधिवक्ता एस. के. झा के हस्तक्षेप के बाद 14 अगस्त 2021 को इस महिला को बिहार सुधारात्मक प्रशासनिक संस्थान हाजीपुर में स्थानांतरित कर दिया गया जहाँ पर वह महिला आज भी रह रही है और अपने वतन वापसी का इंतजार कर रही है। बिहार मानवाधिकार आयोग में 29 अगस्त 2022 को मानवाधिकार अधिवक्ता एस. के. झा ने उपस्थित होकर अपना पक्ष रखा, जिसपर सुनवाई करते हुए बिहार मानवाधिकार आयोग के सदस्य न्यायाधीश उज्ज्वल

कुमार दुबे ने गृह विभाग बिहार सरकार के अपर मुख्य सचिव से 29 नवंबर तक जवाब की माँग की है।

अमानवीयता का कीचड़

https://www.deshbandhu.co.in/editorial/articles-mud-of-inhumanity-106918-2

देश की पहली महिला दलित राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू ने जब इस सर्वोच्च पद की शपथ ली थी, तो इसे देश में एक नए युग का आगाज़ बताया गया था। भारत के लोकतांत्रिक मिज़ाज की शान में कसीदे पढ़े गए थे कि यहां एक छोटे से गांव की आदिवासी महिला भी प्रथम नागरिक के ओहदे तक पहुंच सकती है। महिला सशक्तिकरण की बड़ी-बड़ी बातें तो हुई ही थीं, इसके साथ ही उम्मीदें जतलाई गई थीं कि इस ऐतिहासिक घटना से देश में महिलाओं की स्थिति, खासकर दलित, आदिवासी, मजदूर तबके की महिलाओं के दिन फिरेंगे। जिस वक्त मीडिया, सोशल मीडिया पर साक्षर, संपन्न और सुखी तबके के लोग इस वंचित वर्ग के बारे में अपनी-अपनी राय प्रकट कर रहे होंगे, उस वक्त सुनीता खाखा या तो लोहे की सलाखों से मार खा रही होंगी या फिर शाब्दिक हिंसा का शिकार हो रही होंगी। उन्हें पता भी नहीं होगा कि उनके सुखद भविष्य को लेकर कैसे-कैसे दावे इस तथाकथित उदार और प्रगतिशील समाज में किए जा रहे हैं।

संभव है सुनीता खाखा ने कभी द्रौपदी मुर्मू का नाम भी न सुना हो। उन्हें इस बात से भी क्या फर्क पड़ता है कि देश की प्रथम नागरिक उनके जैसी एक आदिवासी महिला हैं या कोई सवर्ण महिला हैं। सुनीता खाखा की छोड़िए, क्या माननीया राष्ट्रपति महोदया इस बात से अवगत हैं कि झारखंड से लेकर दिल्ली और देश के दूर-दराज के शहरों में सुनीता खाखा की तरह की कितनी महिलाएं हैं, जो अघोषित तौर पर बंधुआ मजदूर बना दी गई हैं और शोषित होने के लिए अभिशप्त हैं। अगर श्रीमती मुर्मू इस तरह के शोषण की घटनाओं से परिचित हैं, तो फिर यह देखने की उत्सुकता बनी रहेगी कि वे इसे रोकने के लिए और देश की करोड़ों सुनीता खाखा को गुलामी से आज़ाद कराने के लिए कोई पहल करती हैं या नहीं।

गौरतलब है कि सुनीता खाखा एक घरेलू सहायिका का नाम है, जिसे झारखंड की एक भाजपा महिला नेता के चंगुल से छुड़वाया गया है। आरोप है कि सीमा पात्रा नाम की भाजपा नेता ने आदिवासी महिला को सुनीता खाखा को 6 साल तक अपने घर पर बंद रखा। और इस दौरान उन पर ऐसे अत्याचार किए, जिन्हें देखकर हैवान भी घबरा जाए। सीमा पात्रा सुनीता खाखा को न केवल मारती-पीटती थी, बल्कि उन्हें जीभ से फर्श साफ़ करने और पेशाब चाटने को मजबूर किया गया। गुमला जिले की रहने वाली सुनीता ने एक वीडियो में लड़खड़ाती आवाज में आपबीती व्यक्त करते हुए बताया कि कैसे उनके दांत लोहे की छड़ से तोड़ दिए और गर्म तवे से उनके शरीर को जला दिया। जिन अत्याचारों को लिखते-पढ़ते भी हाथ कांप जाएं, उन्हें सुनीता ने बार-बार सहन किया है। सीमा पात्रा अक्सर इस तरह की मारपीट करती थी और कई बार उनका बेटा उन्हें ऐसा करने से रोकता था। उनके बेटे के दोस्त की पहल पर ही रांची पुलिस ने

सुनीता खाखा को सीमा पात्रा के घर से छुड़ाया। शारीरिक तौर पर बुरी तरह घायल सुनीता खाखा को रिम्स में भर्ती कराया गया है।

इस पूरे मामले में एक विडंबना ये है कि सीमा पात्रा खुद भाजपा की महिला विंग की राष्ट्रीय कार्यसमिति की सदस्य थीं और एक सेवानिवृत्त आईएएस अधिकारी महेश्वर पात्रा की पत्नी हैं। इस घटना की खबर बाहर आते ही भाजपा ने सीमा पात्रा को पार्टी से निष्कासित कर दिया है। उन्हें गिरफ्तार भी कर लिया गया है। लेकिन जब देश की न्याय व्यवस्था ऐसी हो चली है कि बलात्कार के सजायाफ्ता लोग रिहा हो रहे हैं, देश की रगों में सांप्रदायिकता का जहर घोलने वाली घटनाओं से जुड़े मालमों को अब सुनवाई के योग्य न मानते हुए बंद किया जा रहा है, और इंसाफ को सत्ता के गलियारों में कैद कर दिया गया है, उसके बाद क्या यह उम्मीद की जा सकती है कि सुनीता खाखा को इंसाफ मिलेगा या उनके दोषियों को सजा मिलेगी। जिन लोगों के पास सत्ता और प्रशासन दोनों का रसूख हो और उसके साथ दौलत की ताकत, क्या वो इतनी आसानी से कानून के शिकंजे में आ पाएंगे। सुनीता खाखा के लिए फिलहाल राष्ट्रीय महिला आयोग ने निष्पक्ष और समयबद्ध जांच की मांग की है।

मुमकिन है राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग भी इस मामले में स्वत: संज्ञान लेते हुए जांच की बात कहें। मगर क्या इससे भविष्य के लिए निश्चिंत हुआ जा सकता है कि इसके बाद देश में कोई दूसरी आदिवासी महिला या घरेलू सहायिका सुनीता खाखा की तरह प्रताड़ित नहीं होगी। अगर तथाकथित सभ्य समाज अपने गिरेबां में ईमानदारी से झांकने की कोशिश करेगा, तो उसे इसका जवाब मिल जाएगा कि इस घटना के बाद भी ऐसी घटनाओं पर रोक नहीं लगेगी। क्योंकि सवर्ण और संपन्न तबके ने अब भी अपने से कमजोर लोगों को इंसान समझने और उनसे गरिमा के साथ व्यवहार करने की तमीज़ नहीं सीखी है।

जिस तरह की घटनाएं जमींदारी और सामंती व्यवस्था के दौर में होती थीं, वो आज भी वैसे ही घट रही हैं, तो इसका मतलब यही है कि एक समाज के तौर पर हमने केवल भौतिक तौर पर प्रगति की है, नैतिकता के मामले में हमारे पैर अब भी वर्गीय व्यवस्था के कीचड़ में धंसे हुए हैं। इस कीचड़ में जाति और धर्म के कीड़ों को पनपने का मौका मिलता है। हैरानी की बात ये है कि इस कीचड़ से हमें घिन नहीं होती, बल्कि अब तो गर्व के साथ उसे और फैलाया जा रहा है। सुनीता खाखा के रूप में इस कीचड़ का एक शिकार अभी समाज के सामने आया है, तो उसे साफ करने का दिखावा हो रहा है। लेकिन इस तरह के शिकार इससे पहले भी कई बार, लगातार मिलते रहे हैं और हर बार ऐसे ही दिखावे होते हैं। कुछ साल पहले दिल्ली के संभ्रांत इलाके में झारखंड से आई एक लड़की को केवल इसलिए मार दिया गया था, क्योंकि उसने अपनी मेहनत के पैसे मांग लिए थे। गुड़गांव में एक नाबालिग को घर पर बंद कर उस घर के मालिक छुट्टियां

मनाने चले गए थे, उनके पड़ोसी की पहल पर उस नाबालिग को पुलिस ने घर से बाहर निकाला और उसे बेहद बुरी दशा में पाया था। इस साल फरवरी में झारखंड से ईडी ने मानव तस्करी में लगे कुछ लोगों को गिरफ्तार किया था, जो मजबूर लड़कियों को प्लेसमेंट एजेंसियों के जरिए दिल्ली जैसे महानगरों में नौकरी दिलवाकर करोड़ों कमाते हैं। देश में बंधुआ मजदूरी, मानव तस्करी सब गैरकानूनी हैं, लेकिन फिर भी इन कामों से करोड़ों की कमाई की जा रही है, तो जाहिर है इसके तार सत्ता और प्रशासन में बैठे लोगों तक भी जुड़े होंगे।

अपनी सुविधा के लिए घर के कामों में किसी को सहायक के तौर पर रखना एक आम चलन है। और एकल परिवारों में जहां पति-पत्नी दोनों कामकाजी हों, वहां 24 घंटे के लिए काम पर सहायिकाएं रखी जाती हैं। चंद हजार रुपयों के बदले इनसे भरपूर काम लिया जाता है और उस पर बेरहमी ये कि इन्हें इंसान की तरह नहीं माना जाता। बड़ी-बड़ी रिहायशी इमारतों में इन सहायिकाओं के लिए पुलिस की जांच के बाद प्रवेश पत्र जारी किया जाता है, कई इमारतों में इन लोगों के लिए अलग लिफ्ट होती है, और इतना अपमान काफी नहीं होता तो फिर मनमाफिक सेवा न मिलने पर इन्हें प्रताड़ित करने में संकोच नहीं किया जाता। गरीब तबके के लोग इस तरह की मानसिक और शारीरिक यंत्रणा सहने को मजबूर होते हैं, क्योंकि उनके पास आमदनी का और कोई जरिया नहीं होता। उदारीकरण के बाद के एक दशक में देश में घरेलू सहायकों की संख्या में करीब 120 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई। 1991 के 7,40,000 के मुकाबले 2001 में यह आंकड़ा 16.6 लाख हो गया था और अब तो 20 साल और गुजर चुके हैं, निश्चित ही यह आंकड़ा भी और बढ़ गया होगा।

जिस देश में 5 करोड़ से अधिक घरेलू कामगार हों, वहां सुनीता खाखा जैसी कितनी महिलाओं की जिंदगी होगी, ये कल्पना करना कठिन नहीं है। इन महिलाओं को सम्मान के साथ काम करने का मौका तभी मिल सकता है, जब में श्रम की गरिमा स्थापित हो और काम को छोटा या बड़ा समझने का नजरिया बदला जाए। प्रसंगवश याद आता है कि आलो आंधारी की लेखिका बेबी हालदार ने भी अपनी आजीविका के लिए दिल्ली और गुड़गांव में घरेलू सहायिका के तौर पर काम किया था। लेकिन उनकी योग्यता की ओर लेखक प्रबोध कुमार जी का ध्यान गया, तो उन्होंने न केवल बेबी हालदार को पढ़ने और अपनी आत्मकथा लिखने के लिए प्रेरित किया, बल्कि उनकी आत्मकथा का बांग्ला से हिंदी अनुवाद किया। बाद में यह किताब अंग्रेजी और दूसरी वैश्विक भाषाओं में अनूदित हुई और विश्व स्तर पर चर्चित हुई। प्रबोध जी बेबी हालदार के लिए तातुश बने और एक अभिभावक की तरह उसे आगे बढ़ाया। उनके जितनी उदारता और सदाशयता समाज से न भी दिखाई जाए, लेकिन मानवता की अपेक्षा तो समाज से की ही जानी चाहिए।